अनुराग ट्रस्ट की
त्रैमासिक पत्रिका
20 रुपये
अक्टूबर-दिसम्बर 2014
कोंपल

कोंपल

त्रैमासिक, वर्ष 1, अंक 4
अक्टूबर - दिसम्बर 2014

सम्पादकीय कार्यालय
डी-68, निरालानगर
लखनऊ-226020
फोन : 0522-2786782

इस अंक का मूल्य : 20 रुपये
वार्षिक सदस्यता : 100 रुपये
(डाक व्यय सहित)
आजीवन सदस्यता : 2000 रुपये

स्वत्वाधिकारी अनुराग ट्रस्ट के लिए गीतिका द्वारा डी-68, निराला नगर, लखनऊ से प्रकाशित तथा लक्ष्मी ऑफसेट प्रेस, इन्दिरानगर, लखनऊ से मुद्रित।

सम्पादन एवं प्रकाशन पूर्णत: स्वैच्छिक तथा अवैतनिक

इस अंक में

हमारी बात

प्यारे बच्चो,

जब तक तुम्हारी यह पत्रिका तुम्हारे हाथों में पहुंचेगी सर्दी अपने पूरे तेवर के साथ मौजूद हो चुकी रहेगी। ऐसी ठंड में तुम्हारे लिए सुबह उठना और स्कूल के लिए तैयार होना तुम्हारी दिनचर्या की सबसे मुश्किल घड़ी होती तो होगी। लेकिन यदि अपनी पसंदीदा कोई पत्रिका या किताब हाथ लग जाये तो ऐसे मौसम में दिन ढलते ही लिहाफ़ लपेटकर या किसी छुट्टी वाले दिन धूप की गुनगुनी गर्मी में पसरकर इन्हें पढ़ने का अपना मजा भी तो होगा। साथ में खाने की कोई गर्मागर्म चीज हो तो फिर बात ही क्या! कबड्डी हो या क्रिकेट, इन दिनों खेल भी तबियत से खेला जा सकता है, न कोई चिपचिपा पसीना और न कहीं घमौरियां। बस खेलते रहो मजे से! सो कुल मिलाकर यह मौसम बढ़िया ही रहता है!

इस अंक में हम तुम्हारे लिए 'खुशियों का स्कूल' लेकर आये हैं। यह एक ऐसे स्कूल के बारे में है जो भारी बस्तों और उबाऊ टीचरों के बगैर भी खूब मजे से चल रहा था। जरा सोचो, यदि ऐसा स्कूल आज मिल जाये तो उसमें भला कौन न पढ़ना चाहेगा!

—तुम्हारी दीदी

तुम्हारी बात

अन्तरिक्ष विज्ञान मेरा प्रिय विषय है। कास्मॉस मैं बडे चाव से पढ़ती हूं। मेरी दोस्तों को भी बहुत पसंद है। हमारे सामने एक बिल्कुल नई दुनिया खुल जाती है। हम सूरज को देख सकते हैं कहानी भी मुझे बहुत अच्छी लगी।

अंकिता शर्मा, गाजियाबाद

मुझे कविताएं पढ़ना अच्छा लगता है। लेकिन मेरे पापा कहते हैं कि पहले अपनी पढ़ाई पूरी करो फिर कविता और कहानी पढना। बाद में तो और भी समय नहीं मिलेगा। कोर्स की पढाई भी ज्यादा हो जायेगी।

गौरव प्रजापति, गोरखपुर

मेरी बच्ची को कोंपल पत्रिका बहुत पसन्द आई। कार्टून चित्र कैसे बनाये वाला पन्ना वह सबसे पहले खोलती है और कागज और स्केच पेन लेकर चित्र बनाने बैठ जाती है। उसे कहानियां भी पसन्द है। नन्हें आर्थर का सूरज वह कई बार पढ़ गई।

अमिता खन्ना, पंजाब

भोंबोल सरदार

(चौथी किश्त)

देश छोड़ कर

छोटा सा डिब्बा, मुसाफिर भी कम हैं। जो हैं, उनमें से कुछ खाली बेंचों पर पसर कर लेटे हुए हैं। एक आदमी कोनेवाली खिड़की के पास बैठकर बीड़ी फूँक रहा है। लेटनेवालों में से एक ने पूछा – 'कौन सा स्टेशन है?'

बीड़ी पीने वाले ने धुआँ छोड़ते हुए जवाब दिया – "सातकोदाले"! 'ओ चाचा! चाचा, अब उठ जाओ' – कहने पर पूछने वाला आदमी उठकर बैठ गया।

इस बीच भोंबोल खिड़की से बाहर झांक कर स्टेशन देख रहा था। रेल जैसे ही प्लेटफॉर्म छोड़कर मैदानों में दौड़ने लगी, सन-सन करती ठंडी हवा का एक तेज झोंका अन्दर घुस आया। अरे यह क्या! चारों ओर उजाला छाया हुआ है। मतलब यह रात दो बजे वाली ट्रेन नहीं है! वह इतनी देर तक सोता रहा! और यह ट्रेन भी तो कलकत्ते की ओर नहीं जा रही है! तो फिर क्या वह उल्टी ओर गोआलंद की दिशा में जा रहा है? ओह! सब कुछ गड़बड़ हो गया।

कितने ही दिन तो इसी गाड़ी ने भोंबोल की नींद तोड़ी है। आँखें खुलने पर वह देखता, छप्पर की दरार से भोर की किरणें आ रही हैं। आंगन में चंपा की डाली पर बैठा कौआ काँव काँव कर रहा है। नींबू तले पपीहा एक बार

कूक कर चुप हो गया। बगल के नीलमणि वकील के बैठकखाने में फर्श पर सोया उनका मुंशी सुरेन ढाली जम्हाई ले रहा है और साथ ही बोलता भी जा रहा है – ''दुर्गा, दुर्गा!'' माहौल में हल्की सी सिहरन है। भोंबोल खिड़की से हट आया और कमर से धोती के खुंटे को खींचकर बदन पर ओढ़ लिया। खुंटे में बंधा नासपाती एक कूबड़ की तरह पीठ पर पड़ा रहा।

बीड़ी पीने वाले आदमी की नज़र अब भोंबोल पर पड़ी। पूछा – 'तुम कहाँ जाओगे?'

भोंबोल ने जवाब दिया – 'टाटानगर'

उस आदमी के लिए टाटानगर एक अनजान नाम था।

आँखें चढ़ाकर उसने पूछा – 'वह कहाँ है?'

अब भोंबोल को खुद ही नहीं पता कि टाटानगर किस दिशा में है। उसने बिना सोचे समझे उल्टी तरफ इशारा कर दिया – 'उस ओर।'

–'फिर इस ओर क्यों जा रहे हो?'

भोंबोल ने कोइ जवाब नहीं दिया।

उस आदमी ने पूछा – 'तुम क्या स्कूल के छात्र हो?'

भोंबोल ने सर हिलाकर हामी भर दी।

अब उस आदमी ने भोंबोल को सर से पैर तक नापा। और पूछा – 'घर से भागकर आये हो क्या?'

भोंबोल चुपचाप बैठा रहा। ट्रेन तेज़ रफ़्तार से भाग रही थी। अब दिन निकलने ही वाला था। पूरब का आसमान लाल हो उठा, सूरज निकलने को है। सातकोदाले अब काफी पीछे छूट गया था। अब आगे टेंगरामारी है। वह रहा उसका झील। पानी के ऊपर उड़ता हुआ बगुला, मड़राती मछुआरी चील। बारिश के दिन अभी अभी खत्म हुए हैं। पानी से लबालब भरी हुई झील समुंदर का भान दे रही है। झील का नाम है 'मकर'। मकर झील में इस समय मछलियों का अंबार है। यह समय है जब मछुआरे दक्खिन वाली नहर से होकर मछली पकड़ने आते हैं। उन्हीं लोगों की नावों की कतारें दिगन्त में दीख रही हैं।

उस बार भोंबोल समेत सात आठ जन साथ-साथ चलकर यहाँ तक पैदल आये थे। सातकोदाले से मकर झील की दूरी कुछ तीनएक कोस की होगी। (कुल मिलाकर लगभग दस किलोमीटर)

यह रास्ता रतनपुर गाँव होकर गुजरता था। दोनों ओर दिगन्तव्यापी धान के खेत फैले थे। हवा पके धान के गलियारों से होकर गुजरती और धान की बालियाँ बजने लगतीं झनर-झन-झन – मानो धान्य लक्ष्मी पैंजनियाँ पहन खेतों के बीच से चलते हुए आ रही हों। झील में चारों तरफ जहाँ तहाँ कमल और शालुक के जंगल हैं। साथ में हैं सरकंडे और श्यामल घास! शापला और कमल के लाल सफेद फूल और नीचे उनके हरे पत्तों की बाढ़ में पानी ओझल हो चुका है (शापला और शालुक – छोटे आकारवाले कमल की दो प्रजातियां)। गन्ध से हवा भारी है।

कमल की झाड़ में मधुमक्खी और साँप का ख़तरा बना रहता है। भोंबोल का दोस्त जग्गा कमल तोड़ते समय साँप के काटने से बस बाल-बाल बच गया। साँप कमल के डंठल से लिपटा हुआ था और खिले कमल पर सिर रखे चुपचाप पड़ा हुआ था। कमल की ओर जग्गा ने जैसे ही हाथ बढ़ाया, तेज़ फुत्कार के साथ साँप उसपर झपट पड़ा। बाप रे, कितना बड़ा फन था उस साँप का! दोस्तों के साथ मिलकर भोंबोल ने

उस बार जितनी मछलियाँ पकड़ी थीं, घर लौटने पर चाचा के हाथों उससे भी कहीं ज्यादा मार खाया था। भोंबोल के मन में यह तीव्र इच्छा जगी कि वह दौड़कर झील के किनारे-किनारे कास के जंगलों का एक चक्कर लगा आये।

वह आदमी कह रहा था – "सुनते हो बबुआ, अब घर लौट जाओ, टिकट है न तुम्हारे पास?"

भोंबोल के पास टिकट नहीं था, उसने कहा – "नहीं"।

"फिर तो मुश्किल है। तीन स्टेशन बाद टीटी साहब आयेंगे।" भोंबोल ने टीटी को टिकट जाँचते हुये देखा है। टीटी लोग बड़े बेरहम होते हैं। उसने तय किया कि उसके आने के पहले ही वह कहीं उतर जायेगा। और फिर गाँवों के बीच से चलते हुए वह पहुँच ही जायेगा – टाटानगर। इसी बीच गाड़ी टैंगरामारी पहुँचकर रुक गई थी। कुछ मुसाफिर उतर गये। अब अगला स्टेशन आलमपुर है। भोंबोल को आलमपुर के बारे में भी पता है।

दो मिनट रुक कर ही गाड़ी चल दी थी। खेतों में घूप फैल गई थी। मैदानों में चरवाहे गाय चरा रहे थे। खेत मजदूर धान की निकौनी कर रहे थे। देखते देखते आलमपुर आकर गुज़र गया। डिब्बा अब खाली हो चुका है। बीड़ी पीने वाला आदमी भी आलमपुर में उतर गया।

खाली डिब्बा पाकर भोंबोल का मन खुश हो गया। ट्रेन की चक्कों की धुन के साथ उसने अपनी आवाज़ मिला दी। गाते-गाते उसने एक बार गरदन खिड़की के बाहर निकाली। निकालते ही उसका दिल काँप उठा – टीटी, बगलवाले कमरे के दरवाजे पर! वह फिरंगी था या पंजाबी! क्या पता, पर उसकी आँखें गंदी थीं। पल भर के लिए उसने अपनी निर्मम निगाहें भोंबोल की ओर फेरी फिर डिब्बे के अंदर ओझल हो गया। अब समय नहीं रहा, उसका इस डिब्बे में आना अब

ही है। उसने मज़बूती से कमर कस ली। दरवाजा खोलकर उसने सामने की ओर देखा। सामने वह रहा सिग्नल। झुका हुआ सिग्नल भोंबोल को देख कर मुस्कुरा दिया (आखिर, स्टेशन अब आने ही वाला है। उस ज़माने में, दिन में झुका हुआ सिग्नल, हरे सिग्नल का सूचक होता था।) पर गाड़ी इतनी धीमी क्यों हो गयी? इंजन ड्राइवर पर भोंबोल को खूब गुस्सा आया। किसी काम का नहीं है यह ड्राइवर, कुछ नहीं जानता, कुछ भी नहीं। हो न हो यह ड्राइवर जरूर पावरोटी खा रहा होगा, और फायरमैन गाड़ी चला रहा है। इन लोगों को कोई दंड क्यों नहीं देता?

बस कुछ ही देर की बात थी। भोंबोल के मन में आया कि वह इसी वक्त डिब्बे के बाहर कूद पड़े। पर कूदना ख़तरे से खाली न था। वह मर भी सकता है।

बच भी जाये तो हाथ या पैर तो टूट ही जायेंगे। फ़िर पुलिस भी पकड़ लेगी। तो फिर क्या वह शौचालय के भीतर जाकर छुप जाये, पर इस डिब्बे में तो वह भी नहीं था। बेंच के नीचे छुपने से भी क्या वह बच पायेगा। चेकर की पैनी निगाहें उसे अच्छी तरह ढूंढ़ लेंगी। बिना टिकट रेल का सफ़र सचमुच जोखिम भरा है, इस बार वह किसी तरह बस बच निकले! उसने एक बार फ़िर अपनी गरदन बाहर निकाली – शायद अगला स्टेशन आने वाला हो! पर सामने तो वैसा कुछ भी नहीं दीख रहा है। दोनों ओर तार का घेरा है। बीचो बीच रेल की पटरी सीधे आगे की ओर चली गयी है। इंजन के धुँए से सामने का आसमान काला हो गया है।

भोंबोल ने तय कर लिया कि अब कूदना

भोंबोल ने फिर खिड़की से बाहर झाँका। सारा खेल खत्म! टीटी भी बगल की खिड़की से बाहर झाँक रहा है। ट्रेन इतनी धीमी हो गयी है, अगर वह कहीं अभी इस डिब्बे में चला आये? भोंबोल का मन किया वह इंजन ड्राइवर की अच्छी तरह मरम्मत कर दे। तेज़ चलाओ, तेज़ चलाओ, अरे यह तो उल्टे रुकने को है। भोंबोल ने झट उल्टी तरफ की खिड़की से बाहर झाँका। प्लेटफॉर्म आ रहा है। उसने तेजी से दरवाजा खोला। गाड़ी के रुकने का इंतज़ार किये बिना वह सीधा कूद पड़ा, सम्हला और फिर दौड़ते हुए पलभर में तार के घेरे में बीचवाली जगह में से फौरन बाहर चला आया।

अब भला उसे कौन पकड़ सकता था! दो मिनट बाद हाफँती गाड़ी भी सीटी बजाते हुए स्टेशन छोड़ कर चल दी।

बंगला से अनुवाद : **देवाशीष बराट**

लातविया की लोककथा

अँगीठी के नीचे
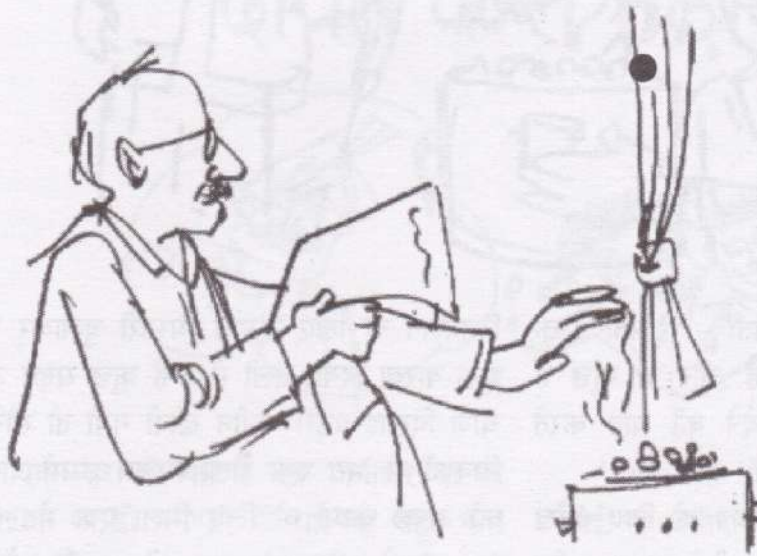
विंत्सेन्त त्सुकला

दादाजी हमेशा अँगीठी के पास ही बैठे रहते थे। उन्हें गरमी के दिनों में भी सर्दी लगती थी इसीलिए वह अपना सारा समय अँगीठी के पास ही बैठकर बिताते थे। साथ ही साथ वह अख़बार और कुछ किताबें भी पढ़ते रहते।

उनकी सारी चीजों को उनके सभी बच्चों ने आपस में बाँट लिया था। अब दादाजी के पास कुछ एक चीजें ही बची रह गयी थीं। और उनमें से भी कुछ उनके नाते-पोती उठा ले गये। कोई भी ऐसा नहीं था जो उनकी देखभाल ठीक ढंग से करे।

उनके पास अक्सर यूज्का नाम का एक छोटा-सा लड़का आता। वह उनके भाई के बेटे का बेटा था। दोनों एक दूसरे से खूब मगन होकर बतियाते रहते। इस तरह दादाजी का समय कट जाता था। यूज्का अँगीठी में लकड़ियाँ डालने में भी दादाजी की मदद करता । यह देखकर दादाजी की आँखें भर आतीं।

दादाजी अक्सर ही एक कविता गुनगुनाया करते थे -

मेरे पास था भी जो कुछ,
बाकी रहा न उसमें अब कुछ।
जो कुछ रह गया उससे पहले का,
बस दूँ केवल अपने प्रिय को
कभी न दूँ मैं और किसी को।

उनके बच्चे हँसते और उनसे पूछते - "पिताजी, आपने तो सारा सामान पहले ही दे दिया है, अब आपके पास भला क्या बचा है?"

उनकी बहुएँ भी मजाक उड़ातीं – "पिताजी के पास बस एक अँगीठी ही है और तो कुछ है नहीं। फिर कौन-सी चीज़ देने की बात करते हैं?"

एक दिन दादाजी ने हमेशा के लिए आँख मूँद ली। उनके पास जो कुछ भी बचा-खुचा रह गया था, उसे भी उनके बच्चों ने आपस में बाँट लिया। सामान का बँटवारा करते समय उन्हें यूज्का की याद आयी, वह अँगीठी के पास चुपचाप खोया सा बैठा था। वह समझ नहीं पा रहा था कि किन चीज़ों का बँटवारा हो रहा है और क्यों हो रहा है? सबने यूज्का से कहा – "हम जानते हैं कि तुम दादाजी को बहुत प्यार करते थे। तुम हमेशा दादाजी के साथ इसी अँगीठी के पास बैठकर पढ़ते थे। इसलिए यह अँगीठी और उनकी पुस्तकें तुम अपने पास रख लो।"

यूज्का दादाजी के बारे में सोच रहा था, उसे जवाब देते न बना। दादाजी के बेटों ने वकील को बुलाकर अँगीठी यूज्का के नाम करवा दी। अँगीठी निकालने के लिए उन्होंने मिस्तरी बुलाकर काम शुरू करवा दिया। तली में उन्हें कुछ सख़्त उभरी चीजें दिखाई पड़ीं। जमीन खोदी गयी तो सोने के सिक्कों से भरा एक थैला मिला। उसमें दादाजी को अच्छे कामों के लिए मिला एक मेडल भी था। उसके साथ एक पत्र भी था जिसमें यह लिखा हुआ था – मुझे हर समय सर्दी लगती है। यह सब कुछ उसी का होगा जिसे सर्दी लगती है। जो मेरी अँगीठी का सम्मान करता है उसे ही यह अँगीठी मिलेगी और उसी का यह थैला भी होगा। – दादाजी

घटनास्थल पर वकील साहब भी थे। उन्होंने उस पत्र को पढ़ा और उस पर मोहर लगा दी ताकि यूज्का से कोई उसका थैला न छीन सके। सबने यह मान लिया था कि यूज्का को अँगीठी और किताबें देकर सस्ते में निपट जायेंगे। पर अब सोने के सिक्कों से भरा थैला हाथ से निकलता देखकर वे बहुत मायूस हुए।

अनुवाद : **शाकम्भरी**

उक्रेनी लोककथा

एक किसान ने ज़मींदार के साथ दावत कैसे उड़ायी
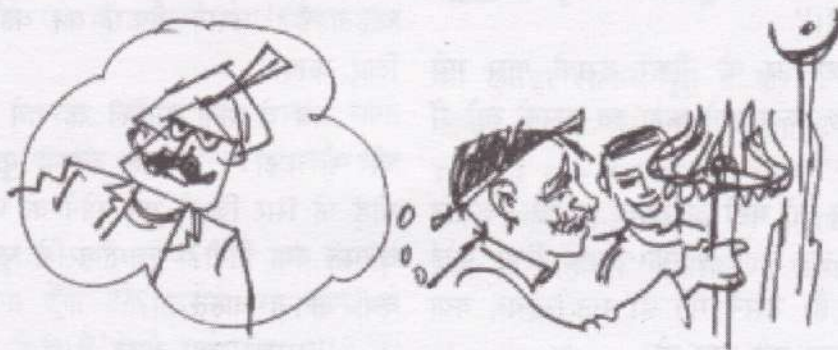
एक बार की बात है एक जमींदार था जो अमीर तो था ही घमण्डी भी था। वह बहुत कम लोगों से मिलता-जुलता था। जहाँ तक किसानों की बात थी वह उन्हें इंसान ही नहीं मानता था, कहता कि उनसे बदबू आती है, उनसे मिट्टी की गन्ध आती है। उसने अपने नौकरों को हुक्म दे रखा था कि उनमें से कोई कहीं आसपास भी नज़र आ जाये तो उन्हें दूर खदेड़ दिया जाये।

एक दिन किसान इकट्ठा हुए और जमींदार के बारे में बातें करने लगे। एक ने कहा, ''मैंने जमींदार को बहुत करीब से देखा वह मुझे खेत में मिला था।''

दूसरे ने कहा, ''मैंने कल चारदीवारी के उस पार देखा था, जमींदार अपनी बालकनी में कॉफी पी रहा था।'' तभी तीसरा किसान जो उनमें सबसे ग़रीब था वहाँ आया और उनकी बातें सुनकर हँसने लगा।

''अरे! यह तो कुछ नहीं है,'' उसने कहा। ''कोई भी जमींदार की चहारदीवारी के उस पार झाँक सकता है। अगर मैं चाहूँ तो मैं जमींदार के साथ दावत खा सकता हूँ।''

दोनों किसानों ने जोर का ठहाका लगाया और कहा, ''तुम और उसके साथ दावत करोगे? जैसे ही वह तुम्हें देखेगा बाहर खदेड़ देगा। घर के आसपास भी वह तुम्हें फटकने नहीं देगा।''

दोनों किसान उस तीसरे किसान का मजाक उड़ाने लगे और उसको गालियाँ देने लगे।

वे उस पर चिल्लाये, ''तुम झूठे और शेख़ीबाज हो।''

''मैं ऐसा नहीं हूँ।''

''ठीक है, अगर तुम जमींदार के साथ दावत करते हो तो हम तुम्हें गेहूँ की तीन बोरियाँ और दो बैल देंगे और अगर नहीं कर पाये तो जो हम कहेंगे वह तुम्हें करना होगा।''

किसान ने जवाब में कहा, ''ठीक है।''

वह जमींदार के अहाते में पहुँचा। जैसे ही जमींदार के नौकरों ने उसे देखा, वे उसे बाहर खदेड़ने के लिए दौड़ पड़े।

''ठहरो!'' किसान ने कहा। "मेरे पास जमींदार के लिए एक खबर है।"

''कौन सी खबर?''

''वह मैं जमींदार को ही बताऊँगा, किसी और को नहीं।''

फिर जमींदार के नौकर उसके पास गये और जो कुछ किसान ने कहा था उसके बारे में बताया।

जमींदार को बड़ी उत्सुकता हुई कि किसान उससे कुछ लेने नहीं बल्कि उसके लिए कोई खबर लाया है। उसने मन ही मन सोचा, क्या पता कोई काम की बात हो।

उसने अपने नौकरों को हुक्म दिया, ''किसान को पेश करो।''

नौकर किसान को अन्दर ले आये। जमींदार उसके पास खिसक आया और उससे पूछने लगा, ''तुम क्या खबर लाये हो?''

किसान ने नौकरों की ओर देखते हुए कहा, ''मेरे मालिक, मैं आपके साथ अकेले में बात करना चाहता हूँ।''

अब तक जमींदार की उत्सुकता पूरी तरह जाग उठी थी – 'आखिर किसान उसे क्या बताना चाहता है?' उसने नौकरों को वहाँ से जाने के लिए कहा।

जब वे दोनों अकेले रह गये तो किसान ने धीरे से कहा – ''दयालु स्वामी मुझे बताइये कि घोड़े के सिर जितने बड़े सोने के एक टुकड़े की कीमत क्या होगी?'' जमींदार ने पूछा, ''तुम यह क्यों जानना चाहते हो?''

''इसकी एक वजह है।''

जमींदार की आँखों में लालच टपकने लगा और उसके हाथ काँपने लगे।

''किसान यूँ ही मुझसे यह सवाल नहीं पूछ रहा है, उसे ज़रूर कोई खजाना मिला होगा।'' उसने अपने आपसे कहा और वह किसान से जवाब उगलवाने की कोशिश करने लगा।

उसने फिर पूछा, ''भले आदमी, मुझे बताओ तुम यह किसलिए जानना चाहते हो?'' किसान ने गहरी साँस लेते हुए कहा, ''ठीक है, अगर आप मुझे नहीं बताना चाहते तो रहने दीजिए। अब मैं जा रहा हूँ, मेरे रात का भोजन मेरा इंतजार कर रहा है।

जमींदार अपना घमण्ड भूल गया। साफ दिखायी दे रहा था कि वह लालच से काँप रहा है।

उसने मन ही मन सोचा ''मैं इस किसान को उल्लू बना दूँगा और उससे वह सोना ले लूँगा।'' उसने कहा, ''देखो भलेमानस, तुम्हें घर जाने की क्या जल्दी है? अगर तुम्हें भूख लगी है तो तुम मेरे साथ खाना खा सकते हो। जाओ सेवकों, जल्दी करो, झटपट मेज लगाओ, और हाँ, वोदका लाना मत भूलना।''

नौकरों ने जल्दी से मेज व्यवस्थित की और उस पर भोजन और शराब परोसी।

जमींदार किसान की आवभगत करने लगा। उसके सामने कभी एक व्यंजन रखता तो कभी दूसरा।

''भरपेट खाओ भले आदमी, कोई लिहाज मत करो'' उसने कहा।

किसान ने मना नहीं किया, उसने जी भरकर खाया। जमींदार उसकी थाली और गिलास भरता रहा।

जब किसान इतना डटकर खा चुका कि अब वह और नहीं खा सकता था तब जमींदार ने कहा, "अब जल्दी से जाओ और अपना सोने

का टुकड़ा लाकर मुझे दे दो। मैं तुमसे बेहतर जानता हूँ कि उसे कैसे बेचना है, इसके लिए इनाम में तुम्हें दस रूबल मिलेंगे।''

''नहीं, मेरे मालिक मैं आपके लिए सोना नहीं ला पाऊँगा।'' किसान ने कहा।

''क्यों नहीं?''

''क्योंकि मुझे कोई सोना अभी तक मिला नहीं।''

''क्या! फिर तुम उसकी कीमत क्यों जानना चाहते थे?''

''केवल उत्सुकतावश।''

जमींदार बहुत नाराज हो उठा। उसका चेहरा नीला पड़ गया और वह अपना पैर पटकते हुए चिल्लाया, ''मूरख कहीं का, निकल जा यहाँ से!''

किसान ने जवाब में यह कहा : ''मेरे दयालु मालिक! मैं उतना भी मूर्ख नहीं हूँ जितना आप सोचते हैं, आपके खर्चे पर मैंने बढ़िया खाने का मजा उठाया, और साथ ही मैं गेहूँ की तीन बोरियाँ और दो गोल सींगों वाले बैलों की शर्त भी जीत गया। इसके लिए अकल चाहिए।"

यह कहते हुए वह वहाँ से चल दिया।

अनुवाद : **गीतिका**

विज्ञान

कॉस्मास

प्रसिद्ध खगोलविज्ञानी और लेखक कार्ल सागान की विश्व प्रसिद्ध रचना के अंश

विश्व सागर के तट पर (दूसरी किस्त)
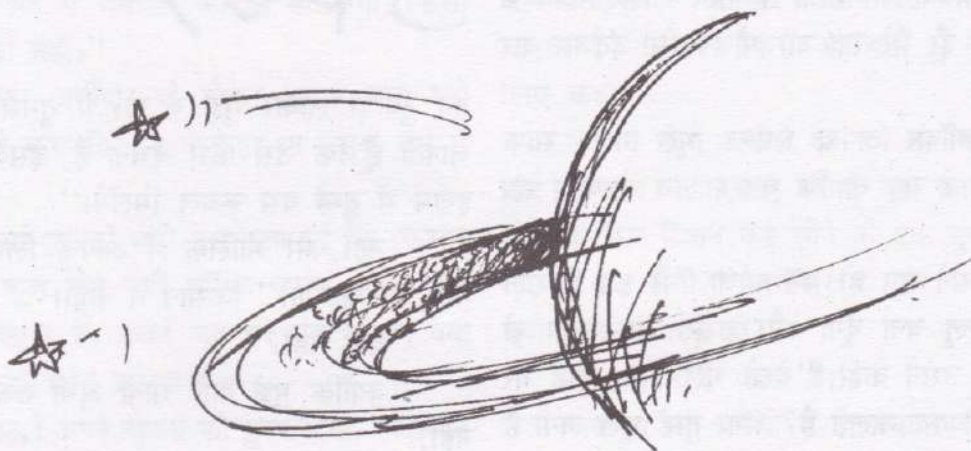
अब हम अपने पीछे वाले आँगन में पहुँच गये हैं, पृथ्वी से बस एक प्रकाश-वर्ष दूर। दैत्याकार तुषार गोले, जो कि बर्फ, चट्टानों और जैव यौगिकों के अणुओं से बने हुए हैं, गोलाकार झुण्ड बनाकर सूर्य को घेर रखे हैं। ये हैं पुच्छल तारों के अन्तस्तल, उनके नाभिक। समय-समय पर किसी गुज़रते हुए तारे के गुरुत्वीय आकर्षण का एक हल्का-सा झटका इनमें से किसी एक को सौरमंडल के अन्तर्महल में प्रविष्ट कर देता है। सूर्य की धधकती किरणें उसे उत्तप्त कर देती है, बर्फ भाप बन कर फैल जाती है और एक बहुत सुन्दर पुच्छ या पूँछ निकल आती है।

हम अपने अंचल के ग्रहों की ओर बढ़ते जा रहे हैं, विशालकाय दुनियाएँ, सूर्य के कैदी, उसके गुरुत्वीय आकर्षण से प्रायः वृत्ताकार पथों में चलने को बाध्य और मूलतः सूर्य प्रकाश से गर्म। मीथेन की बर्फ से ढका हुआ प्लूटो ग्रह अपने एकमात्र चाँद, विशालकाय शारों (Charon) के साथ, सूर्य के द्वारा आलोकित, वह सूर्य, जो काजल काले आसमान में एक उज्ज्वल आलोक बिन्दु तरह चमक रहा है। दैत्याकार गैसीय दुनियाएँ नेपच्यून, यूरेनस, सौरमंडल का रत्न शनि, और बृहस्पति, इन सबके साथ बर्फीले चाँदों के काफिले हैं। इन गैसीय ग्रहों, उनकी परिक्रमा करते हुए तुषार शिलाओं के इलाके के अन्दर सौरमंडल के भीतरी भाग का दहकती चट्टानों वाला अंचल है। वह रहे आसमान छूने वाले ज्वालामुखी, मीलों-मील फैली घाटियाँ, ग्रहव्यापी रेतीली आँधियाँ, और हो न हो कुछ सरल जीवनस्वरूपों के साथ, लाल ग्रह मंगल। सारे ग्रह अपने करीबी तारे, सूर्य का चक्कर काटते हैं। सूर्य पर हाइड्रोजन और हीलियम की नाभिकीय अभिक्रिया के कारण

करोड़ों परमाणु बमों के विस्फोट जैसी आग्नेय ऊर्जा पैदा होती रहती है जो संपूर्ण सौरमंडल को प्रकाश से नहला देती है।

अब हम चरम दुःसाहसिक कल्पनाओं के पहुँच के सुदूर पार विश्व महासागर में खोयी हुई, हमारी अपनी छोटी-सी, क्षणभंगुर, श्वेत-नीली दुनिया में लौट आये हैं। सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड में बिखरी अनगिनत दुनियाओं में से एक। हो सकता है कि यह बस हमारे लिये ही प्रासंगिक हो। धरती, हमारा घर, हमारा पालक माता-पिता। हमारे जैसी जीवन की उत्पत्ति स्थल और विकास भूमि। यहीं मानव जाति परिपक्व होने की दहलीज़ पर पहुँच रही है।

इसी धरती पर खड़े होकर हमने अपने विश्व खोजी सपनों को जगाया, यहीं हम अपने भविष्य निर्माण में लगे हुए हैं, जिसमें कठिनाइयाँ हैं, पर कोई स्थिरता नहीं।

धरती पर आपका स्वागत है-अपना नीला नाइट्रोजन का आसमान, तरल जल की नदियाँ, शीतल वन और कोमल घास के मैदानों के साथ, ऊर्जस्विनी प्राणमयी एक दुनिया, विश्व परिप्रेक्ष्य में तीव्र रूप से सुंदर और विरल और साथ ही समय के इस पड़ाव पर एक अनोखी दुनिया। दिक् और काल में हमारी सारी यात्राओं के दौरान अब तक, यह वह एकमात्र दुनिया है जहाँ हम बिना किसी सन्देह के जानते हैं कि, विश्व द्रव्य को जीवन और चैतन्य मिला। अंतरिक्ष में निश्चित रूप से ऐसी अनेकों दुनियाएँ बिखरी होंगी, लेकिन उनकी खोज यहीं से शुरू होती है, जिसके पीछे दस लाख वर्षों के हमारी प्रजाति के मनुष्य का अब तक संचित ज्ञान और अनुभव जुड़ा हुआ है, जिसे पाने में हमें भारी कीमत चुकानी पड़ी है। हम भाग्यशाली हैं कि हमने प्रखर मेधा सम्पन्न और अतीव जिज्ञासु लोगों के बीच जन्म लिया है, और ऐसे समय में जन्म लिया है जब ज्ञान की खोज को अत्यन्त उच्च स्थान दिया जाता है। एक दुनिया जिसे धरती कहते हैं, वह कुछ वक्त के लिये हमारा ठौर है। जहाँ से हमें घर की लम्बी वापसी यात्रा शुरू करनी है।

प्रस्तुति : **देवाशीष बराट**

कहानी
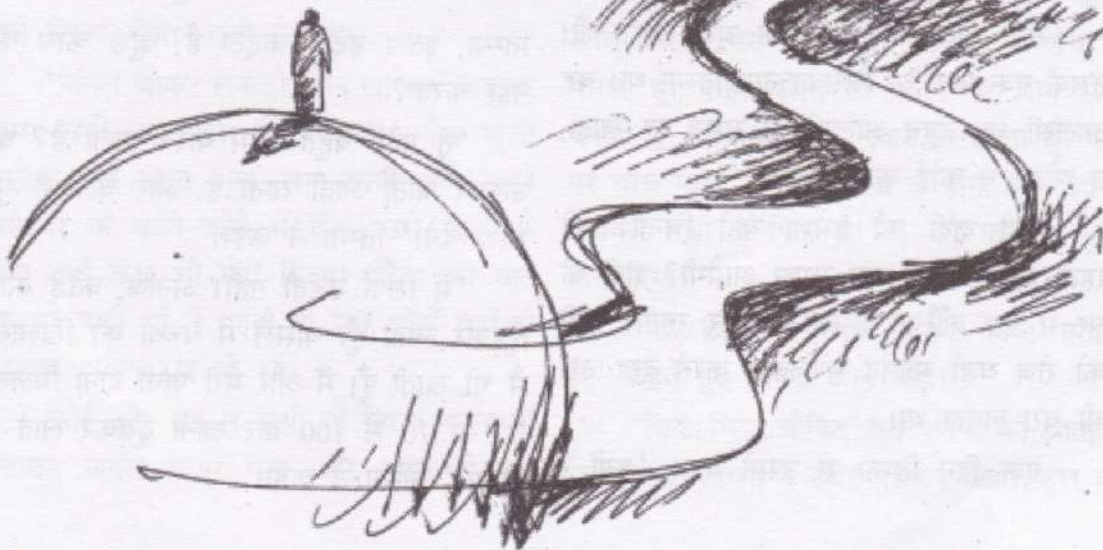
आलसी तिम्मा

● एम.आर. शिवशंकर

एक गाँव था, वहाँ एक बूढ़ी दादी थी। उसके एक पोता था जिसका नाम तिम्मा था। वह आलसी था, बहुत आलसी। न समय पर खाता, न सोता, न कोई काम करता।

बूढ़ी दादी को हमेशा यही चिन्ता लगी रहती थी कि इसे कब समझ आयेगी? दादी के घर में एक गौरैया घोंसला बनाकर रहती। दादी को रोज बड़ी मेहनत मशक्कत करते देख उसे भी बुरा लगता था।

एक दिन तिम्मा से उसने कहा, 'क्यों रे तिम्मा, इतना हट्ठा कट्ठा है, कुछ काम क्यों नहीं करता?

'तू कौन बहुत काम करने वाली है? बस उड़कर जाती आती रहती है, और चली है मुझे सीख देने।' तिम्मा ने कहा।

'मैं सिर्फ उड़ती नहीं। अनाज, कीड़े आदि ढूँढ़कर लाती हूँ। घोंसले में बच्चों को खिलाकर मैं भी खाती हूँ। मैं और मेरी पत्नी दोनों मिलकर दिन में 70 से 100 बार खाना ढूँढ़कर लाते हैं, समझे!' गौरैया ने कहा।

'हजार बार उड़कर जाओ, उससे मुझे क्या मतलब। मेरी बातों में दख़ल दिया तो मैं तेरा घोंसला तोड़कर फेंक दूँगा, समझे?' तिम्मा ने कहा। उसकी बातों से डरकर गौरैया उड़कर भाग गई।

'इस आलसी को सही राह पर लाना ही होगा।' गौरैया ने सोचा। उसे एक उपाय सूझा, वह तुरन्त दादी के पास गयी।

'दादी, तिम्मा अगर आलसी है तो इसका कारण तुम हो। उसे रोज समय पर खाना बनाकर खिला देती हो, इसी कारण वह ऐसा हुआ है। मेरा कहा मानो तो वह समझदार बन जायेगा।' उसने कहा।

गौरैया ने अपना उपाय दादी को बताया।

अगले दिन खाने के समय जब तिम्मा रसोईघर में घुसा तो उसे दादी माँ दिखायी नहीं पड़ी। वह कमरे में कम्बल ओढ़कर पड़ी रही।

'दादी माँ, मुझे भूख लगी है, आकर खाना परोसो!' उसने कहा।

'मुझे शीत ज्वर है। मैं खाना नहीं पका सकी। लकड़ी भी खत्म हो गयी है। जंगल जाकर लकड़ी चुन लाओ। किसी तरह पकाकर तुम्हें खिला दूँगी।' दादी ने कहा।

'जंगल जाकर लकड़ी कौन लायेगा' कहकर तिम्मा वहीं पड़ा रहा। जब उसकी आँख खुली तबतक उसे बहुत भूख लग आयी थी। उसने रसोईघर के कोने-कोने में ढूँढ़ा। उसे खाने के लिए वहाँ कुछ भी नहीं मिला। गौरैया की बात मानकर दादी माँ ने पहले ही सब चीजें वहाँ से हटाकर अलग रख दी थी।

कोई और राह न सूझी तो तिम्मा कुल्हाड़ी उठाकर जंगल गया। भूख और प्यास से वह निढाल हो रहा था। वहाँ जाकर एक पेड़ के नीचे सो गया।

'टक...टक' की आवाज सुनकर तिम्मा की नींद खुल गई, उसने उस ओर देखा जहाँ से आवाज आ रही थी। सोने का हल्दिया और काला रंग, सिर और उसके पिछले हिस्से का लाल रंग, गले पर काला और सफेद – इस तरह कई रंगोंवाली एक चिड़िया पेड़ पर चोंच मार रही थी।

'कौन है, जो इतना शोर मचा रहा है?' तिम्मा ने आँख मलकर पूछा।

'मुझे कठफोड़वा कहते हैं। मैं ही यह आवाज कर रहा हूँ।

'इससे क्या लाभ?' उस पक्षी से उसने पूछा। 'मेरी नींद उचट गई तुम्हारे कारण।'

'इस समय कौन सोता है भला? खूब मेहनत करके कमाओ खाओ। सोया तो रात को ही जाता है।'

'खाओ न, किसने मना किया है, लेकिन वह टक...टक की आवाज कैसी?' तिम्मा ने कहा।

'देखो, पेड़ में छेद बनाकर घर बनाने वाले कीड़े-मकोड़े मेरा आहार हैं। पेड़ को मैं चोंच से मारता हूँ। कहीं ढीला-सा लगने पर वहाँ सेंध बनाता हूँ, जीभ से कीड़े पकड़कर खाता हूँ। पेड़ पर चोंच मारते समय आवाज तो होगी ही।' इतना कहकर पक्षी ने फिर से पेड़ को फोड़ना शुरू कर दिया।

'यह छोटा-सा पक्षी कितना कष्ट उठाते हैं,' कहते हुए तिम्मा आगे बढ़ा।

'चिप...चिप...चीविट' कई पक्षियों की आवाज़ सुनायी दी। तिम्मा ने उधर मुड़कर देखा। फूल के

पौधों की झाड़ी में छोटे-छोटे पक्षी एक से दूसरे फूल पर उड़ते हुए अपनी लम्बी झुकी चोंच से फूलों पर झुककर पराग खींच रहे थे। लगातार आवाज़ करते, उड़ते उन पक्षियों को देखकर तिम्मा ने उनसे पूछा, 'आप कौन हैं, और क्या कर रहे हैं।'

'हम गाने वाले पक्षी हैं, तुम नहीं जानते, चुप बैठने से थोड़े ही पेट भरता है। हम फूलों पर उड़कर उनका पराग पी लेते हैं।' गायक पक्षी ने कहा।

'कितने छोटे आकार के पक्षी हैं, लेकिन पेट भरने के लिए कितना श्रम करते हैं।' तिम्मा ने कहा। यह सुन कर गायक पक्षी बोला 'श्रम से ही पेट भरता है। तुम क्या काम करते हो?

छोटे पक्षी को तिम्मा कोई उत्तर न दे सका, उसने सिर झुका लिया। उसने निश्चय किया कि वह आगे से खूब काम करने के बाद ही खाना खायेगा।

'यहाँ पर पीने का पानी कहाँ मिलेगा?'

'यहाँ से सीधे चले जाओ, वहाँ पर एक तालाब है।' गायक पक्षी ने कहा।

तिम्मा तालाब की दिशा में आगे बढ़ने लगा।

पेड़-पौधों की झाड़ी में घुसा हुआ – ऊपर से हरा, और नीचे सफेद, सिर पर फीके नीले रंग और लम्बी पूँछ वाला एक पक्षी 'टुविट-टुविट' की आवाज के साथ कुछ काम कर रहा था।

तिम्मा वहीं खड़ा हो गया और उस पक्षी को देखने लगा। वह पक्षी पौधे के दो पत्तों के बीच रेशों से सिलाई कर रहा था।

'तुम कौन हो, इन पत्तों को इस तरह क्यों सिल रही हो?' उसने पूछा।

'मैं दर्जी पक्षी हूँ। अण्डा देने के लिए मैं घोंसला बना रही हूँ।'

उसकी बात सुनकर बोला, 'वाह रे! एक मूँठ भर इसका आकार नहीं। कितनी अच्छी सिलाई कर रही है।'

फिर वह तालाब पर पहुँचा।

वहां पानी पर उसने देखा कि कबूतर से भी छोटा एक पक्षी वहाँ उड़ रहा था। सफेद रंग और काले रंगों वाला यह पक्षी उड़ना छोड़कर एकदम रुक गया। फिर दोनों पंख समेट कर पानी में डूब गया।

वह अभी यह सोच ही रहा था कि यह कौन है और पानी में क्यों डूबा कि तब तक वह पक्षी पानी से बाहर निकल भी आया। उसकी तलवार जैसी लम्बी चोंच में एक मछली दबी थी। उड़कर वहीं एक चट्टान पर जा बैठा और मजे से खाने लगा। वह वक राजा था।

'संसार का हर जीव अपना पेट भरने के लिए श्रम करता है। मैं इतना बड़ा हो गया हूँ, फिर भी अब तक दादी माँ के हाथ का अन्न खा रहा हूँ। आगे से काम करके मुझे खाना चाहिए' तिम्मा ने निश्चय किया।

तालाब का पानी भरपेट पीकर उसने काफी लकड़ियाँ काट लीं और उसे उठाकर घर ले आया।

उस दिन से वह खूब श्रम करता, दादी माँ की मदद करता और सभी से प्रशंसा पाता।

पोते को समझदार देखकर दादी माँ खुश थी। उपाय सुझाने वाली गौरैया की उसने खूब प्रशंसा की। गौरैया भी अपने उपाय का फल देखकर खुश थी।

जानकारी

कैसे फैली दुनिया में बल्ब की रोशनी?

●आनन्द सिंह
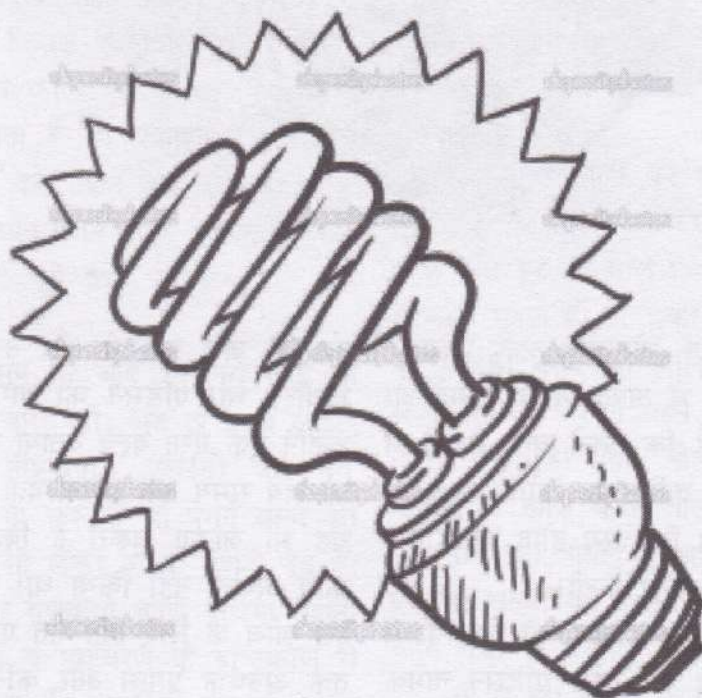
सुबह से लेकर शाम तक सूरज की रोशनी से हमारे आस-पास का माहौल जगमगाता रहता है। लेकिन शाम होते ही यह रोशनी मद्धिम पड़ने लगती है। फिर एक समय ऐसा आता है जब सूरज डूब जाता है और चारों तरफ़ अंधेरा छा जाता है। लेकिन तभी हम बिजली का स्विच दबाकर बल्ब जलाते हैं और हमारा घर फिर से रोशन हो जाता है। सड़कों, पार्कों एवं बाज़ारों में हर जगह बिजली से जलने वाले बल्ब की रोशनी से एक बार फिर पूरा माहौल जगमगाने लगता है। लेकिन क्या आप जानते हैं कि बिजली से जलने वाले बल्ब की रोशनी हमेशा से इंसानों की सेवा में नहीं हाज़िर थी। ज़्यादा नहीं अभी डेढ़ सौ साल पहले की बात है जब पूरी दुनिया में लोग शाम

और रात को लालटेन, मोमबत्ती आदि जलाकर बहुत मद्धिम रोशनी में अपना काम चलाते थे। सोचने वाली बात है कि इतनी कम रोशनी में काम करना कितना कठिन रहा होगा। साथ ही साथ यह भी जानना दिलचस्प होगा कि दुनिया में बल्ब की रोशनी कैसे फैली।

शायद तुमने सामान्य ज्ञान की किताबों में पढ़ा होगा कि बल्ब की खोज एडिसन नामक एक अमेरिकी वैज्ञानिक ने की थी। लेकिन यह तथ्य केवल आंशिक रूप से ही सही है। पूरी सच्चाई यह है कि बिजली से जलने वाले बल्ब की खोज एडिसन से पहले ही कई वैज्ञानिक कर चुके थे। हालाँकि बिजली से जलने वाले बल्ब की खोज 19वीं सदी की शुरुआत में ही हो चुकी थी, लेकिन 1879 से पहले तक बिजली से जलने वाले बल्ब बहुत कम समय तक ही जल पाते थे और उनको बनाना बेहद खर्चीला था। एडिसन का योगदान यह था कि उन्होंने एक ऐसा बल्ब बनाया जो सस्ता था और जो लंबे समय तक रोशनी देता था। साथ ही हमें यह भी जानना ज़रूरी है कि एडिसन ने यह काम अकेले नहीं किया था। बेशक एडिसन ने इस खोज के लिए दिन-रात एक करते हुए वर्षों तक अनथक प्रयास और कठिन परिश्रम किया था, लेकिन यह भी उतना ही सच है कि इस पूरी खोजी प्रक्रिया में उनके साथ तमाम सहयोगी भी शामिल थे जिनके सहयोग और परिश्रम के बगैर एडिसन यह खोज नहीं कर सकते थे। इस प्रकार हम पाते हैं कि तमाम खोजों की ही तरह बल्ब की खोज मानव के सामूहिक प्रयासों का नतीजा थी।

आओ अब हम देखते हैं कि एडिसन ने

जिस बल्ब की खोज की थी वह जलता कैसे है। यदि इस बल्ब को ग़ौर से देखोगे तो पाओगे कि यह एक महीन शीशे का बना होता है जिसका आकार गोल होता है। इसके भीतर एक बहुत पतले तार जैसी कोई चीज़ होती है जिसे फिलामेंट कहते हैं। एडिसन के समय कार्बन का फिलामेंट इस्तेमाल होता था,परन्तु अब टंगस्टन नामक धातु का फिलामेंट इस्तेमाल होता है। बल्ब के भीतर आर्गन नामक निष्क्रिय गैस होती है जो ऑक्सीजन की भाँति किसी चीज़ को जला नहीं सकती। जब हम स्विच दबाते हैं तो बिजली इस बल्ब में प्रवाहित होती है जिससे फिलामेंट जल उठता है और उसके जलने की वजह से बल्ब के भीतर ताप पैदा हो जाता है जो प्रकाश में परिवर्तित होकर हमारे घर को रोशन कर देता है। चूँकि बल्ब के भीतर ऑक्सीजन जैसी गैस नहीं होती, इसलिए फिलामेंट पूरी तरह जलकर राख नहीं होता है।

परन्तु एडिसन के बाद भी नये तरह के बल्बों की खोज जारी रही। अब तो ट्यूब लाइट, हैलोजन बल्ब, सीएफएल, एलईडी जैसे नये प्रकार के बल्ब आ चुके हैं जो पुराने बल्ब की अपेक्षा कम बिजली लेकर ज़्यादा रोशनी देते हैं। साथ ही वे बेहतर गुणवत्ता वाली दूधिया रोशनी देते हैं। यही नहीं वे पर्यावरण के दृष्टिकोण से भी बेहतर विकल्प हैं। इनमें से एलईडी बल्ब सबसे आधुनिक क़िस्म के हैं। एलईडी (लाइट एमिटिंग डायोड) बेहद छोटे आकार के बल्ब होते हैं जो ऐसे तत्वों से बने होते हैं जिन्हें सेमीकंडक्टर कहा जाता है। इस तरह के बल्ब कुछ मोबाइलों में टॉर्च के रूप में इस्तेमाल किये जाते हैं। पुराने बल्बों की तरह वे पहले बिजली को ऊष्मा में और फिर ऊष्मा को प्रकाश में नहीं बल्कि सीधे बिजली को प्रकाश में बदलते हैं। यही वजह है कि उनमें कम ऊर्जा खर्च होती है। लाल और हरे रंग वाले एलईडी बल्बों की खोज से बहुत पहले ही हो चुकी थी, लेकिन नीले रंग के एलईडी बल्ब की हालिया खोज के बाद ही सफ़ेद रोशनी फैलाने वाले एलईडी बल्ब बनाया जाना सम्भव हो सका। नीले रंग के इन एलईडी बल्बों की खोज करने वाले तीन वैज्ञानिकों को इस साल का नोबल पुरस्कार भी दिया गया है। एलईडी बल्बों का इस्तेमाल आने वाले दिनों में बहुत तेज़ी से बढ़ेगा।
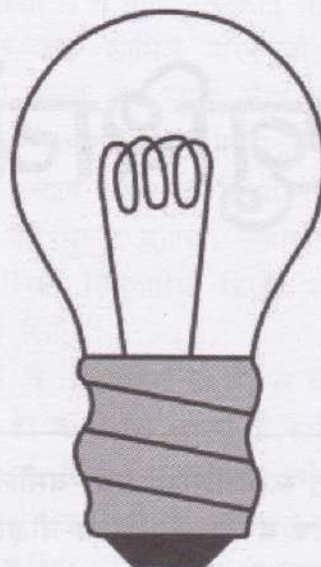
तो ये रहा हमारी ज़िन्दगी रोशन करने वाले विद्युत बल्ब का सफ़रनामा! लेकिन क्या तुम्हें पता है कि विज्ञान की इस शानदार उपलब्धि के बावजूद आज भी दुनिया भर के करोड़ों ऐसे लोग हैं जो अंधेरे में रहने को मजबूर हैं क्योंकि उन तक अभी भी बिजली की रोशनी नहीं पहुँची है? इसकी क्या वजह हो सकती है, इस पर सोचना!

खुशियों का स्कूल

● वसीली सुखोम्लीन्स्की

प्रसिद्ध रूसी शिक्षाशास्त्री वसीली सुखोम्लीन्स्की ने 52 वर्ष की अपनी छोटी-सी ज़िन्दगी में से 35 वर्ष बच्चों की शिक्षा-दीक्षा में बिताये। वे शहर से दूर एक उक्राइनी गाँव के स्कूल में प्रिंसिपिल थे। उनका कहना था कि शिक्षक को शिक्षा देने से पहले बच्चे को प्यार देना चाहिए। तभी वह उनमें श्रम की खुशी, मित्रता और मानवीयता की भावनाएँ भी जगा सकता है। उन्होंने अपने व्यवहार और सिद्धान्त में यह सिद्ध कर दिया था कि हर सामान्य बच्चे को योग्य और अयोग्य की श्रेणी में बाँटे बिना ही उन्हें आगे बढ़ाया जा सकता है। 'टु चिल्ड्रन आई गिव माई हार्ट' उनकी डायरी है, जो अनोखे अनुभवों से भरी पड़ी हैं, यहाँ हम उनका सार दे रहे हैं। - सम्पादक

तैंतीस साल तक मैंने ग्रामीण स्कूल में काम किया। इसे मैं अपना सौभाग्य मानता हूँ। अगर कोई मुझसे पूछे कि मेरे जीवन में सबसे महत्वपूर्ण क्या रहा? तो मैं बिना हिचके उत्तर दूँगा - 'बच्चों से प्रेम।'

ये वे दिन थे, जब 'बचपन' नाम के जादुई महल के द्वार मेरे लिए खुल गये थे। मैंने महसूस किया कि अध्यापक और छात्रों के बीच हृदय के रिश्ते का जुड़ना कितना ज़रूरी है। अध्यापक को एक माँ की तरह बच्चे के पास आना पड़ता है।

द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद का समय था। युद्ध ने हर व्यक्ति को छुआ था। किसी को कम, किसी को ज्यादा। अधिकतर तो तहस-नहस ही हो गये थे। परिवार उजड़ गये थे, बच्चे अनाथ हो गये थे। इन बच्चों को सँभालना मुश्किल काम था। नन्हें दिलों को जरा-सी भी तकलीफ पहुँचाये बिना, युद्ध के दिनों की बुरी यादों से उबार लाना था। कोत्या, गाल्या, पैत्रिक, कोल्या जैसे छह और सात साल के सैकड़ों बच्चे हमारे सामने थे। उनकी नीली, काली, आसमानी आँखों में झाँकते हुए मैं सोच रहा था कि क्या मुझमें इतनी नेकी, इतना स्नेह है कि मैं इन बाल हृदयों को खुशी दे पाऊँगा? इसीलिए मैंने अपने स्कूल का नाम रखा था - ''खुशियों का स्कूल''

सुबह से ही मैं बच्चों की प्रतीक्षा कर रहा था। करीब आठ बजे बच्चे आने शुरू हुए और आधे घंटे में ही लगभग 29 बच्चे आ गये। साशा नहीं आयी और बोआ भी दिखाई नहीं दिया। शायद सो रहा होगा। मैंने बच्चों का स्वागत किया और कहा - ''आओ, चलो स्कूल चलें!'' कहकर मैं बाग की ओर चल दिया। बच्चे हैरानी से मुझे देख रहे थे। मैंने उनके कंधे थपथपाये।

हमारा स्कूल नीले आसमान के नीचे हरी-भरी घास पर नाशपाती के छायादार पेड़ के नीचे था। वहाँ चारों तरफ अंगूर की बेलें फैली थीं। 'आओ बच्चो, जूते उतार दें और नंगे पाँव घास पर चलें।' - कहते हुए मैंने जूते उतार दिये। बच्चों की खुशी का ठिकाना न था। उन्होंने झट से जूते निकाल दिये और हरी, कोमल घास पर पाँव थपथपाने लगे। मुक्ति की यह पहली खुशी देख मैंने सोचा, ठीक ही नाम दिया है हमने इसका - 'खुशियों का स्कूल'।

अंगूर वाटिका के हरे झुटपुटे में सारी दुनिया हरी-भरी लग रही थी। यद्यपि कुछ पल को उनके मन से संकोच हट रहा था। फिर भी बार-बार युद्ध के जख्म, माँ-बाप का बिछुड़ना, बमों के धमाकों से दहले हुए बचपन की छाया उनकी आँखों में तैर आती। सारा दिन यों ही कुछ न कुछ कहते-सुनते बीत रहा था, पर ज्यादातर बच्चे चुपचाप अपने में सिमटे हुए थे। दोपहर ढलने पर अंगूरों के गुच्छे ले, वे लौट गये।

मैंने तय कर लिया था कि अब उन्हें जीवन और प्रकृति की खुशियों से जोड़ना ज़रूरी है। उनके साथ-साथ घास पर धीरे-धीरे कदम रखते हुए, बच्चों को मैं चिड़ियों, तितलियों के बारे में बताता। कुछ बच्चे सुनते, पर कुछ के कानों तक जाकर भी मेरे शब्द ज्यों के त्यों लौट आते। उनकी आँखों में न कोई उत्सुकता थी, न मुँह में प्रश्न। मैंने उन्हें शामिल करने के लिए पूछा -''बताओ बच्चो, यह सूरज कैसा लगता है?''

बच्चों ने अपनी-अपनी कल्पना लगाई। किसी ने सोने का थाल बताया, तो किसी ने उसे बादलों के राजा का मुकुट बताया। अनमनी वोल्वा ने कहा - ''वह चिनगारियाँ बिखेर रहा है, हमें जलाने के लिए।''

''हाँ, वे चिनगारियाँ ही हैं, पर वे जलाने के लिए नहीं हैं। वे तो उन लुहारों के हथौड़ों की हैं, जो सूरज के लिए सुनहरा और चाँद के लिए रुपहला मुकुट बनाते हैं।'' - मैं उन्हें जो बता रहा था, उसका चित्र भी बना रहा था। बच्चे आश्चर्य से कूँची से रंग को कागज पर फैलता देख रहे थे।

समय बीत रहा था, 'खुशियों के स्कूल'' में बच्चे धीरे-धीरे मुखर हो रहे थे। वे ढेरों चित्र बनाते। जो मन में आता, कागज पर उकेर देते।

दोपहर का नाश्ता हम सभी साथ-साथ करते। 'बाकरखानी' (मीठी रोटी) के बड़े-बड़े टुकड़ों पर शहद लगाकर बच्चे ही एक-दूसरे को देते। गरमागरम सूप जो पास के खेतों में उगी ताजी सब्जियों से बनाया जाता, बच्चों में गरमाहट और ताजगी भर देता। दिन पर दिन बच्चे मन और तन से स्वस्थ हो रहे थे। पशु-पक्षियों, कीट-पतंगों और पेड़-पौधों का जीवन हमारे लिए सुखदायी है, यह समझने के लिए हम कहानियाँ सुनाते। 'यूरा' ने दो खरगोशों और साही की दोस्ती की कहानी सुनायी।

मीशा, कात्या, कोल्या चुप थे। मैं समझता था कि वे अभी अपने दुख से उबर नहीं पाये हैं। पहाड़ी के उस पार सूरज डूब रहा था, जिससे सारा दृश्य सिंदूरी हो गया था। पेड़-पौधे, बच्चों

के चेहरे, कपड़े यहाँ तक कि उनकी आँखें भी सिंदूरी रंग में चमक रही थीं। एक दिन कोल्या कुछ देर से, पर भागता हुआ आया। उसके हाथ में गौरैया का एक घोंसला था। जिसमें दो छोटे-छोटे बच्चे लगातार चीं-चीं कर रहे थे। उत्सुक बच्चों ने उसे घेर लिया।

''क्या तुम जानते हो कोल्या, गौरैया अब इन बच्चों को नहीं पालेगी। ये मर जायेंगे?'' - मैंने कहा।

पल भर को वह परेशान हुआ, फिर बोला - ''तो मैं क्या करूँ?''

हमने घोंसले को एक छोटी टोकरी में रख दिया। अँगीठी के पास रख गरमाई देने की कोशिश की, पर माँ चिड़िया के पंखों की गरमाई उन्हें नहीं मिल पाई और वे मर गये। बच्चे उदास हो गये। इसके बाद तो बच्चों के मन पशु-पक्षियों के लिए दया से भर गये। जल्दी ही एक घायल कठफोड़वा, एक पंख टूटा भरत पक्षी और एक छोटा खरगोश जिसकी टाँग में चोट लगी थी, हमारे स्कूल में आ गये। बच्चे हर समय इनकी देखभाल करते। खाने-पीने का इंतजाम करते। वसंत आने तक हमने इनका ध्यान रखा। सारे बच्चे उस दिन खुशी से फूले न समाये, जब भरत पक्षी ने पहली बार बाहर हवा में पंख फडफड़ाये और सुरीली आवाज में एक कूक भरी। बच्चे उसकी आवाज की नकल करते जहाँ-तहाँ कूद रहे थे। उनके चेहरे खुशी से चमक रहे थे।

खुशियों के स्कूल से कुछ ही दूरी पर एक ढलान थी। ढलान के पास गुफा जैसी जगह थी। बच्चों ने ही खेल-खेल में उसे खोज लिया था। हम सब उसमें घुसे, वहाँ काफी जगह थी। ठंडक ज्यादा थी, इसलिए ज़रूरी था कि वहाँ एक अँगीठी बनाई जाये। लगभग सप्ताह भर लगाकर बच्चों ने दीवारों को लीप लिया और एक बडी अँगीठी भी तैयार कर ली। मुझे यह देखकर आश्चर्य हुआ कि कोल्या और कोत्या सूखी घास को उठा-उठाकर ला रहे थे। मीसा साथियों के बनाये चित्रों को दीवार पर चिपका रही थी। पहली बार जिस दिन हमने अँगीठी जलाई, बाहर बर्फ़ की फुहार पड़ रही थी। ऐसे मौसम में हम सभी अपने 'गरम स्वप्न लोक' में

बैठे गीत गा रहे थे।

मेरी कोशिश यह थी कि हर बच्चा धीरे-धीरे निजी पुस्तकालय बनाये, ताकि पुस्तक पढ़ना उसकी आदत बन जाये। अपने अनुभव से मैंने पाया कि बच्चे को सत्य बताने की जगह उसे खोजने के लिए उकसाना ज्यादा अच्छा है।

"जीवन में सबसे ज़्यादा ज़रूरी क्या है?" - एक दिन स्वप्न-लोक में बैठे हुए मैंने पूछा। जवाब में बच्चों ने अलग-अलग नाम लिए - रोटी, पानी, हवा, मकान, बरतन, कपड़े। "रोटी ज़रूरी है, पर बनाने के लिए क्या चाहिए?" पूछने पर बच्चों ने कहा - "आग, बरतन...।"

"आग कहाँ से आती है?" पूछने पर जवाब मिला - "कोयले से!"

- "और कोयला?"

- "खान से।"

- "खान से कौन निकालेगा?"

"मजदूर।" - बच्चों ने समवेत स्वर में कहा।

- "मज़दूर मेहनत से कोयला निकालता है, किसान मेहनत से अनाज उगाता है। यानी मेहनत से सब कुछ बनाया-सँवारा जा सकता है।"

तभी अचानक मैंने पूछा - "बताओ तो, सामने लटकती अंगूर की बेलें कैसी लग रही हैं?"

"हरे झरने जैसी!" - यह मीशा थी, जिसकी आँखों में जीवन की चमक मुझे दिखायी दे रही थी और मेरी पलकें खुशी से भीग आयीं।

अन्तरिक्ष विज्ञान

रोसेटा ने पुच्छल तारे का पीछा कैसे किया?

• सनी

क्या पूँछ वाले तारे को छुआ जा सकता है? सवाल कुछ अटपटा है! पर ऐसा ही है। जवाब है- हाँ, बिलकुल छुआ जा सकता है। हमारे एक सैटेलाइट ने यह कारनामा कर दिखाया है। इसका नाम है 'रोसेटा' जो अब इस पूँछ वाले तारे के चक्कर लगा रहा है। रोसेटा के अपने लैंडर मॉड्यूल यानी ज़मीन पर उतरने वाले एक छोटे से यंत्र फिले ने इस पुच्छल तारे की ज़मीन को छुआ। यूरोप के अंतरिक्ष खोजी विभाग 'यूरोपियन स्पेस एसोसिएशन' के नेतृत्व में यह पूरा प्रयोग मार्च 2004 में शुरू हुआ। इस तारे का नाम है- 'चुर्युमोव- गेरेसिमेंको 67 पी', ओफ्फो कितना लम्बा नाम है! इसलिए इसे सिर्फ '67 पी' कहेंगे। अंतरिक्ष यान रोसेटा के रोबोटिक यान फिले ने इस अटपटे नाम वाले पुच्छल तारे पर अगस्त 2014 में अपने कदम रखे। है न ताज़्जुब की बात! लेकिन यह हमारे वैज्ञानिकों ने कैसे किया? रात के आसमान में कभी-कभी चमकने वाले इस तारे का पीछा कैसे किया गया और उसपर इसे उतारा कैसे गया? सबसे पहले तो हमें यह जानना होगा कि आखिर ये पूँछ वाला तारा क्या होता है और इसका पीछा कैसे किया जा सकता है?

रात के आसमान में जलते तारे - उनमें एक पूँछ वाला भी

रात के आसमान में कितने सारे तारे होते हैं! ऐसा लगता है आसमान एक बहुऽऽऽत बड़ा गुम्बद है और उसकी छत में जड़े हुए हैं ढेर सारे तारे। तारे हमारे अंतरिक्ष की तस्वीर हैं जो धरती के सूरज के चारों ओर घूमने के साथ बदलती रहती है। रात में हम लोग सोते हैं पर हर रोज हमारे घरों के ऊपर तारे जलते रहते हैं, कुछ नीली रोशनी वाले तो कुछ लाल और कुछ तो रंग बदलते रहते हैं। कहीं एक साथ गुच्छे में तो कहीं अलग-अलग, कुछ टिमटिमाते हैं तो कुछ स्थिर रोशनी देते हैं। कई बार टूटते हुए तारों को रोज ही हम देख लेते हैं। वर्षों में कभी कभार पूँछ वाला तारा भी नज़र आता है। पुच्छल तारा आसमान में बहुत कम दिखायी देता है।

क्या तुमने कभी सोचा कि इस गुम्बद को छुआ जा सकता है? इन तारों को? इन टूटते हुए तारों को या इस पूँछ वाले तारे को? हमारे कागज़ के जहाज तो थोड़ा ऊपर ही उड़ पाते हैं! पर दुनिया भर के बड़े-बड़े वैज्ञानिक भी हम लोगों की तरह ज़िद्दी हैं! हम यहाँ कागज़ के जहाज
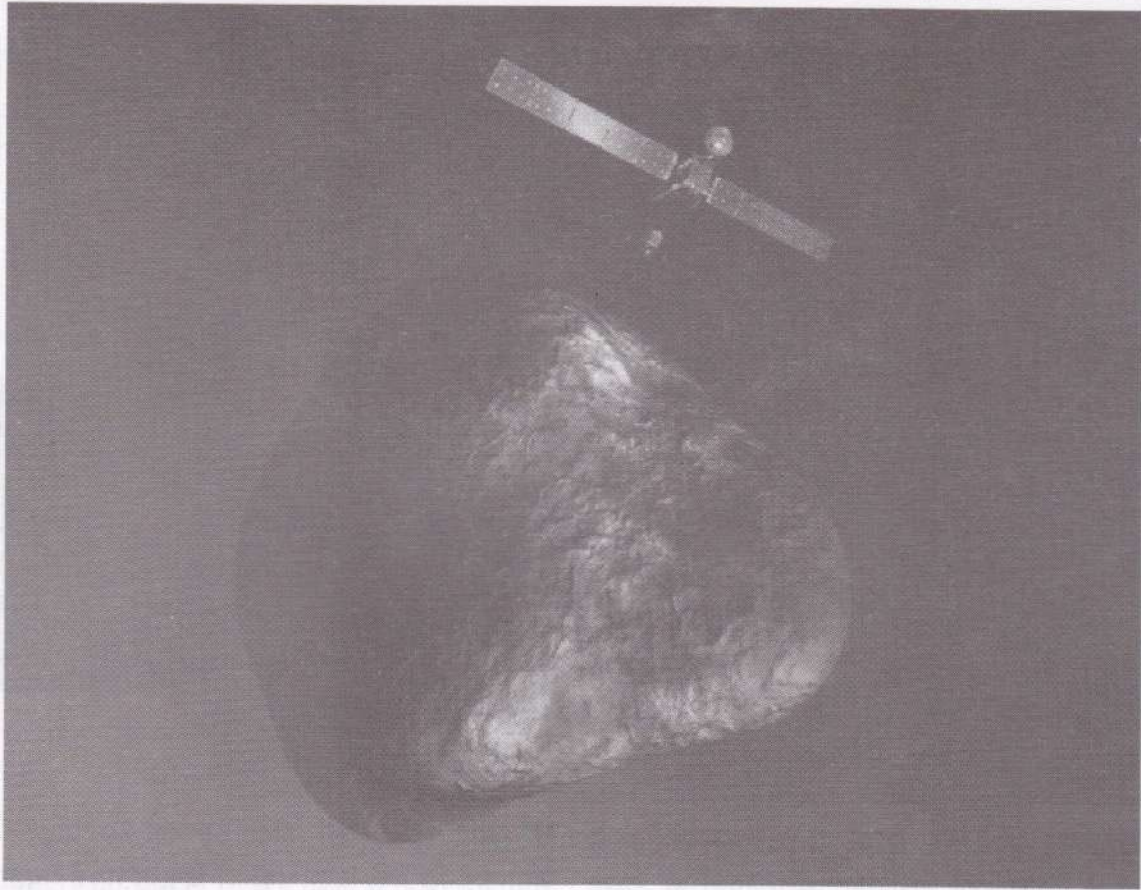
बनाते हैं, उन्होंने राकेट बनाये और आसमान को छूने पहुँच गये। एक वैज्ञानिक ने कहा था कि इंसान के औजार उसके हाथों, आँखों और कानों का ही विस्तार होते हैं। रॉकेट में इन औजारों को रखकर हम सैटेलाइट आसमान में भेज देते हैं। इस सैटेलाइट से हम कहाँ तक पहुँच गये हैं? चाँद पर, मंगल पर, वीनस पर, और ये जो पूँछ वाला तारा रात को बस छूकर निकल जाता है इसपर भी हम लोग पहुँच चुके हैं। ये पूँछ वाला तारा कहलाता है-**कॉमेट या पुच्छल तारा**

सूरज के चारों ओर धरती चक्कर काटती है और इसी तरह मंगल, शनि, बृहस्पति व नये ग्रह भी चक्कर काटते हैं, परन्तु इसके साथ ही लाखों छोटे-छोटे खगोलीय पिंड, जिन्हें छोटे ग्रह समझा जा सकता है, वे भी सूरज के चारों और घूमते हैं। यही हमें टूटते हुए तारे के रूप में रात के आसमान में दिखते हैं। इन्हीं खगोलीय पिंडों में से एक होता है पुच्छल तारा जो इनमें सबसे अलग किस्म का होता है। यह
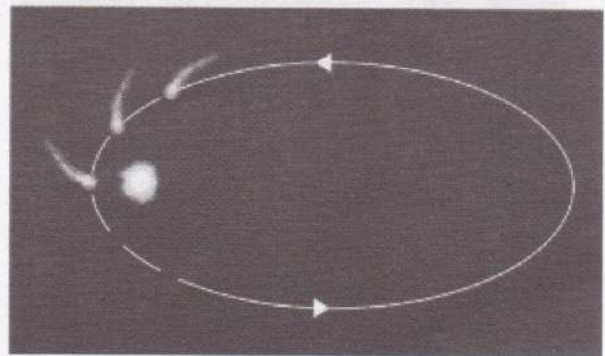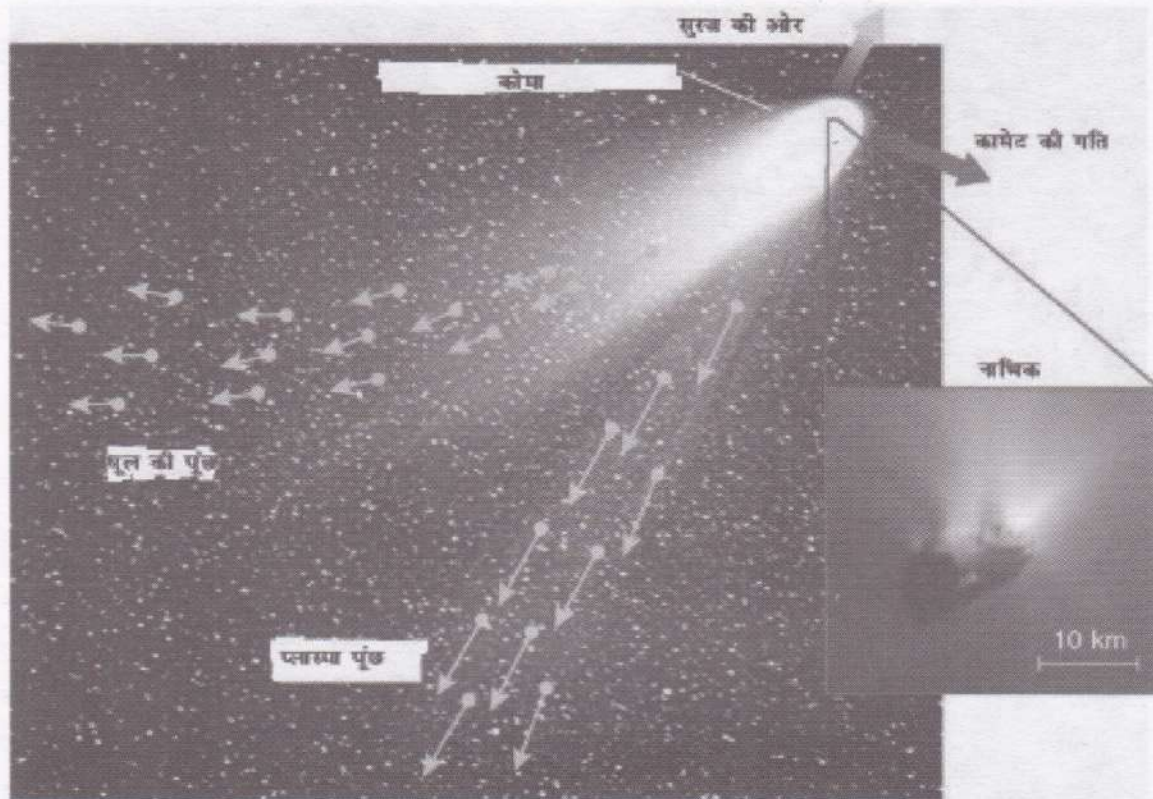
खगोलीय पिंड भी सूरज के चक्कर लगाता है परन्तु इसके दूसरे सभी खगोलीय पिंडों से अलग होने का कारण है-इसका खुद का वातावरण, जो इसकी पूँछ के रूप में और इसकी चमक के रूप में हमें नंगी आँखों से भी दिखायी देता है। इसका वातावरण सूरज की गर्मी में ही सक्रिय होता है क्योंकि तभी इसपर जमी बर्फ पिघल कर भाप और अन्य गैसों के बादल बन इसे घेर लेती है। आओ जरा इसकी बनावट पर बात करें! असल में एक कॉमेट के चार हिस्से होते हैं-

न्युक्लियस यानी नाभिक, **कोमा** (जिससे कॉमेट शब्द बना है), **पूँछ** और **फव्वारा** या **जेट**। पहला हिस्सा ठोस, केन्द्रक होता है जिसे कभी-कभी धूल भरी बर्फ का गोला भी कहते हैं क्योंकि यह चट्टान, धूल और जमी हुई गैसों से बना होता है। यह 10 मील यानी 16 किलोमीटर से ज़्यादा लम्बा नहीं होता है। यह 80 प्रतिशत जमी हुई गैसों से बनी बर्फ से बना होता है। यही कारण है कि जब यह कॉमेट चक्कर लगाते हुए सूरज के करीब आता है तब ये गैस और धूल पिघल जाती हैं और इस केन्द्रक के चारों ओर एक वातावरण बन जाता है। यह वातावरण या केन्द्रक के चारों ओर घिरी हुए गैस सूरज के रेडिएशन से ऊर्जा लेकर प्रज्जवलित हो जाती है। तीसरा हिस्सा कॉमेट की पूँछ जो इसका सबसे ज़्यादा चमकने वाला हिस्सा होता है। यह पूँछ सोलर विन्ड (सूर्य की हवा!) के कारण धूल में और रेडिएशन से गैस में हो रहे रासायनिक बदलावों से बने आयनों (गैस या किसी अणु से इलैक्ट्रॉन निकल जाने पर बनता है) के कारण बनती है। इसके दो हिस्से होते हैं- धूल वाली पूँछ (जो धूल से बनती है) और प्लास्मा पूँछ

(जो आयन से बनती है)। अनोखी बात यह है कि ये पूँछ हमेशा सूरज के उल्टी दिशा में बनती है और धूल वाली पूँछ कॉमेट के रास्ते पर और सूरज दोनो के बीच जाती प्रतीत होती है।

चौथा हिस्सा फव्वारे या जेट, कॉमेट की सतह से निकलने वाले गैसीय विस्फोट होते हैं जो सूर्य की गर्मी के कारण सक्रिय हो जाते हैं। अगर एक कॉमेट का केन्द्रक 80 किलोमीटर है तो उसकी पूँछ सूरज से बड़ी होती है। तस्वीर में कॉमेट का सूरज के चारों और चक्कर काटने की कक्षा दिखायी गयी है, यह अंडाकार होती है। इसलिए कॉमेट सिर्फ तभी चमकता है जब यह सूरज के पास होता है। अब तक हम करीब 5000 कॉमेटों से परिचित हैं। रोसेटा जिस कॉमेट पर पहुँचा था उसका नाम चुर्युमोव- गेरेसिमेंको 67 पी या सिर्फ 67 पी है। यह 6.45 साल में सूरज का एक चक्कर काटता है। तो यह है हमारे पुच्छल तारे की कहानी! इन्हें जानना ज़रूरी क्यों है? इसलिए कि कॉमेट सौर मण्डल के बेहद पुराने सदस्य हैं। इसलिए इनके अध्ययन से हमें अपने सौर मण्डल के वे आँकड़े मिल सकते हैं जिनसे हम अभी परिचित नहीं हैं। अब जरा यह देखा जाए कि रोसेटा 67-पी पर कैसे पहुँचा था?

रोसेटा विमान चला पूँछ वाले तारे की खोज में

2004 में रॉकेट की मदद से आकाश में गया यह सैटेलाइट बेहद ही लम्बे रास्ते को तय कर 10 सालों में इस कॉमेट पर पहुँचा है। जिस अंडाकार कक्षा में 67-पी घूमता है उसमें जाकर इस तक पहुँचना बेहद कठिन है। और तेजी से दूर भाग रहे 67-पी की गति की बराबरी करने के लिए रोसेटा को धरती और मंगल के गुरुत्व का सहारा लेना पड़ा। गुरुत्व से बँधकर सैटेलाइट पहले से अधिक तेजी से घूमता है और नयी गति के साथ कक्षा को प्राप्त कर लेता है। यह ऐसा है जैसे एक गोल घूमते हुए पहिये के साथ कीचड़ हवा में तेजी उछल जाती है। यह नीचे वाली तस्वीर इसको दिखा रही है। अगस्त 2014 में रोसेटा 67-पी की कक्षा में आ गया। इसने अपना रोबोटिक यंत्र फिले(लैंडर)इसकी सतह के अध्ययन के लिए छोड़ा। इस लैंडर में कई यंत्र लगे थे जिन्होंने कॉमेट के वातावरण और
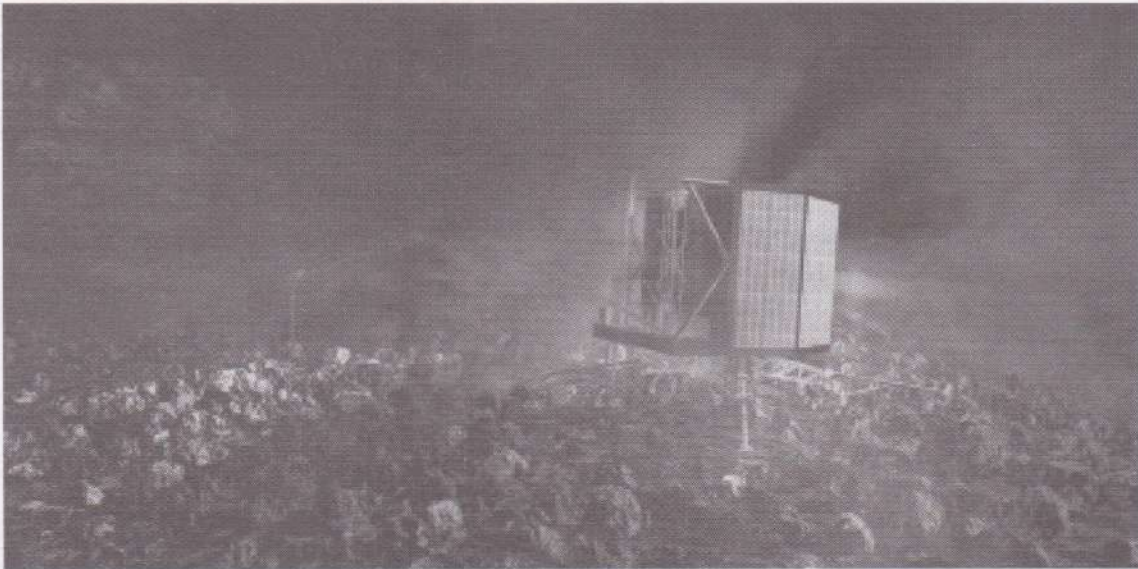
उसकी सतह का गहन अध्ययन किया। उसकी मिटटी, बर्फ और अन्य चीज़ों का अध्ययन कर आँकड़े धरती पर भेजे हैं।

अर्र्र्र... इसकी सतह पर उतरने में थोड़ी गलती हुई! कॉमेट का भार कम होने से इसका गुरुत्वाकर्षण बल भी बेहद कम होता है। इस कारण फिले को सतह पर बने रहने के लिए दो बरछी (हारपुन) गाड़नी थी परन्तु फिले यह नहीं कर पाया। 2004 से लेकर अब तक धरती के जरिये ही रोसेटा को भी नियंत्रित किया जा रहा

था और फिले को भी, नवम्बर में फिले ने अपने आँकड़े भी भेजे, लेकिन उसके साथ हमारा सम्पर्क टूट गया क्योंकि उसकी बैटरी खत्म हो गयी थी। फिले ने हमें बताया की 67-पी की सतह उबड़-खाबड़ है, गड्ढों से भरी हुई है और छोटी-छोटी पहाड़ियाँ हैं, तो कई जगह गैस के जेट हैं।

रोसेटा अभी भी 67-पी के चारों और घूमकर ज़रूरी तथ्य हम तक पहुँचा रहा है। एक उम्मीद यह की जा रही है कि जब 67-पी 2014 में सूरज के करीब आएगा तो सूरज की ऊर्जा से फिले की बैटरी फिर से चार्ज हो जाएगी और वह फिर से अपने काम में लग जाएगा। अभी भी उसे जितना करना था वह काम हो गया है। एक काम अब तुम लोगों को भी करना होगा अब से रोज रात को आसमान ताका करो। इसमें मौजूद तारामण्डल, टूटते तारे और कॉमेट को पहचानो। तुम्हारे शहर या गाँव के पास के शहर में ज़रूर कोई प्लेनेटोरियम (तारामण्डल) होगा। वहाँ जाओ और इन तारों को जानो।

कविताएं

ऐसा क्यों होता है

अपनी बकरी काली
फिर भी देती दूध सफेद
नहीं समझ में आया अब तक
क्या है इसका भेद ?
पत्ती होती हरी, हथेली पर
रचती है लाल,
जाने कैसे करती मेंहदी
जादू-भरा कमाल ?
मुठ्ठी में हर चीज पकड़ लो
हवा न पकड़ी जाती,
जाने ऐसी क्यों होती है
मैं ये समझ न पाती।
मम्मी से पूछो तो कहती-
'खा मत यहाँ दिमाग'
पापा कहते- 'जा मम्मी के
पास चली जा भाग'।

-रमेश तैलंग

हो गये सपने चकनाचूर

एक पेड़ पर दो थे बंदर,
तीन मिले उनको लंगूर।
चार कोस चलकर वे पहुँचे,
पाँचों अपने घर से दूर।
बड़े-बड़े छः बाग वहाँ थे,
पके हुए थे खूब अंगूर।
सात संतरी पहरे पर थे,
आठ काम पर थे मजदूर।
नौ घंटों तक मौका ढूँढा,
फिर भी पाये नहीं अंगूर।
दस घंटों के बाद सभी के,
हो गये सपने चकनाचूर।

- नवीन डिमरी 'बादल'